भारतीय दर्शन का आधारभूत रूप

भारत में 'दर्शन' उस विद्या को कहा जाता है जिसके द्वारा तत्वज्ञान प्राप्त किया जाये। मानव के दुःखों के निवृत्ति हेतु एवं तत्वज्ञान की प्राप्ति हेतु ही भारत में दर्शन का प्रादुर्भाव हुआ जिसका संपूर्ण श्रेय हमारे ऋषियों एवं मुनियों को जाता है।

'दर्शन' शब्द से तात्पर्य है - साक्षात् देखना अथवा परम-तत्व का साक्षात्कार या अपरोक्षानुभव'। पाणीनी व्याकरण के अनुसार 'दर्शन' शब्द 'दृश् प्रेक्षणे' धातु से ल्युट प्रत्यय करके निष्पन्न होता है। व्युत्पत्ति के अनुसार दर्शन का अर्थ है - "दृश्यते अनेन इति दर्शनम्" अर्थात् जिसके द्वारा देखा जाए वह दर्शन है। किंतु यहाँ पर दर्शन से तात्पर्य आँख द्वारा सामान्य वस्तुओं को देखना नहीं है, वरन् सूक्ष्म दृष्टि द्वारा सामान्य वस्तुओं और घटनाओं के पीछे सत्य को देखना है। इसे ही हम दार्शनिक चिंतन कहते हैं। इस चिंतन में अन्तर्दृष्टि तथा तार्किक परीक्षण भी सम्मिलित हैं।

भारतीय दर्शन के अंतर्गत जिस साक्षात्कार का हम दर्शन करते हैं, उसके दो साधन बताये गये हैं - श्रुति और तर्क। 'आत्मा को जानो' (आत्मानं विद्धि) - यह भारतीय दर्शन का उद्घोष वाक्य है तथा त्रिविध दुःखों (आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक) का आत्यांतिक नाश एवं अखण्ड आनन्द की प्राप्ति भारतीय दर्शन का लक्ष्य है। साथ ही इस लक्ष्य की प्राप्ति के त्रिविध साधन श्रवण, मनन एवं निदिध्यासन हैं। यहाँ पर इन तीनों से तात्पर्य है-

(i) श्रवण - श्रुति वाक्यों के श्रवण या पठन से,
(ii) मनन - युक्तियुक्त बौद्धिक चिंतन से, तथा
(iii) निदिध्यासन - ध्यान और समाधि है।

भारतीय दर्शन का आधार वेद एवं उपनिषद हैं और इसका आरंभ भी यहीं वेद हैं। "वेद" भारतीय दर्शन, धर्म, साहित्य एवं संस्कृति आदि सभी के मूल स्त्रोत रहे हैं। अनेक दर्शन संप्रदाय वेदों को अपना आधार और प्रमाण मानते हैं। वेदों

में अनेक प्रकार के दार्शनिक विचार भी मिलते हैं। प्रसिद्ध षड्दर्शन जो कि "आस्तिक दर्शन" कहलाते हैं, इन्हीं के अंतर्गत आते हैं। जो दर्शन संप्रदाय अपने को वैदिक परम्परा से स्वतंत्र मानते हैं वे भी कुछ सीमा तक वैदिक विचार-धाराओं से प्रभावित हैं। यहाँ पर भारतीय दर्शन के आधार रूप 'वेद' एवं 'उपनिषद' का संक्षिप्त विवरण निम्नवत् है —

⇒ वेद ⇒ 'वेद' शब्द ज्ञानार्थक 'विद्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है - 'ज्ञान'। वस्तुतः वेद ज्ञान के भण्डार हैं। यह ऐसा ज्ञान है जिसका ऋषियों-मुनियों ने तपस्या के द्वारा साक्षात्कार किया है। 'अभय ज्योति' के रूप में इस ज्ञान का साक्षात्कार कर इसे ही उन्होंने शब्दों द्वारा मंत्र रूप में प्रकाशित किया है। इन्हीं मंत्रों के संकलन 'वेद' के नाम से विख्यात हैं, जो समस्त ज्ञान के भण्डार हैं। इनका उद्देश्य 'ईष्ट की प्राप्ति' और 'अनिष्ट का परिहार' है। भारतीय परम्परानुसार वेद नित्य और अपौरुषेय हैं। अनादि हैं एवं 'ईश्वर का श्वास' है।

⇒ वेदों की संख्या :→ वेदों की संख्या चार (4) बतायी गई है - (i) ऋग्वेद, (ii) यजुर्वेद, (iii) सामवेद, (iv) अथर्ववेद।

⇒ वेद के विभाग :→ वेद के दो विभाग हैं — मन्त्र और ब्राह्मण।

(i) मंत्र → किसी देवता की स्तुति में प्रयुक्त होने वाले अर्थ-स्मारक वाक्य को 'मंत्र' कहते हैं। ऋषि मंत्र के द्रष्टा हैं।

(ii) ब्राह्मण → यज्ञयागादि के अनुष्ठान का विस्तृत विवेचन करने वाले ग्रंथ को 'ब्राह्मण' कहते हैं।

⇒ वैदिक वांग्मय :→ वैदिक साहित्य का विकास चार चरणों में हुआ है। ये हैं - संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद।

(1)- संहिता → मंत्रों के समूह को 'संहिता' कहते हैं। ये वेद के प्रथम भाग हैं तथा इनमें भक्तिपरक मंत्रों का संकलन है, जिनमें विभिन्न देवी-देवताओं, यथा- अग्नि, इन्द्र, सविता, वरुण, उषा,

आदि की स्तुतियाँ हैं, जो कि वैदिक देवताओं के स्मारक हैं। संहिताएँ चार हैं — ऋक्, साम, यजुः और अथर्व। इन संहिताओं का संकलन यज्ञानुष्ठान की दृष्टि से किया गया है तथा इन यज्ञानुष्ठानों के लिए चार प्रकार के ऋत्विजों की आवश्यकता होती है। ये हैं —

(i) होता → जो स्तुति मंत्रों के उच्चारण से देवताओं का आह्वाहन करता है। इसका सम्बन्ध ऋक् संहिता (ऋग्वेद) से है।

(ii) उद्गाता → जो मधुर स्वर में मंत्र गान करता है। यह 'साम-संहिता' (सामवेद) से सम्बंधित है।

(iii) अध्वर्यु → जो यज्ञ के विविध अंगों का सविधि सम्पादन करता है। यह 'यजुः संहिता' (यजुर्वेद) से संबंधित है।

(iv) ब्रह्मा → जो सम्पूर्ण यज्ञानुष्ठान का विधिवत् निरीक्षण करता है जिससे किसी प्रकार की त्रुटि न रहे। यह 'अथर्व-संहिता' (अथर्ववेद) से संबंधित है।

इस प्रकार से यहाँ पर 'ऋक्' का अर्थ है - पादयुक्त छन्दोबद्ध मंत्र, 'साम' का अर्थ है - गीति या मंत्र गायन, 'यजुः' का अर्थ है - गद्य-मय वाक्य। वेदों को, अथर्व को छोड़कर 'वेद त्रयी' भी कहते हैं। इनमें ऋक्-संहिता सबसे प्राचीन तथा महत्वपूर्ण है।

(2) ब्राह्मण :→ यह वेद का दूसरा भाग है। इसमें यज्ञादि के विविध अंगों का विस्तृत वर्णन है। यह गद्य में है। 'ब्राह्मण' ग्रंथों को यह नाम इसलिए दिया गया क्योंकि 'ब्रह्म' का विस्तृत विवेचन इसका प्रधान विषय है और यहाँ पर 'ब्रह्म' का अर्थ है - 'बढ़ने वाला' 'फैलाने वाला' अर्थात् वितान या यज्ञ है। इन्हें कर्मकाण्डीय साहित्य भी कहा जाता है। इनका उद्देश्य मुख्यतः स्वर्ग एवं भौतिक सुखों की प्राप्ति था। संहिता में जिन देवी-देवताओं की स्तुतियाँ हैं, ब्राह्मण में उन्हें ही 'यज्ञ' में हविष ग्रहण हेतु आहूत किया गया है।

(3) आरण्यक :→ ब्राह्मण ग्रंथों के बाद उनसे सम्बद्ध आरण्यक ग्रन्थ आते हैं। अरण्य (जंगल) के एकांत में पठनीय एवं मननीय होने के कारण इन्हें 'आरण्यक' कहते हैं। इनमें

कर्म से ज्ञान की ओर संक्रमण है। आरण्यक में अनुष्ठान की अपेक्षा यज्ञ के आध्यात्मिक रहस्य पर तथा उपासना एवं ध्यान पर विशेष जोर दिया गया है। इसका चिंतन-मनन संन्यासी एवं वानप्रस्थी आरण्य (जंगल) के शांत वातावरण में करते थे।

(4) उपनिषद :→ ये आरण्यकों एवं वेदों के अंतिम भाग हैं, जो ज्ञान प्रधान हैं तथा दार्शनिक विचारों से भरे हैं। इन्हीं को 'वेदान्त' कहते हैं क्योंकि ये वेद के अंतिम भाग हैं। इनमें वेद के चरम सिद्धांतों का सारभूत तत्व सन्निहित है। इनमें विशुद्ध रूप से ज्ञान पर चर्चा है तथा परवर्ती भारतीय दर्शन (आस्तिक) भी मुख्यतः इन्हीं पर आधृत है।

'उपनिषद' शब्द 'उप' और 'नि' उपसर्गपूर्वक 'सद्' धातु से निष्पन्न होता है। यहाँ सद् धातु के चार अर्थ होते हैं - बैठना, नाश करना (विशरण), प्राप्त करना (गति) और शिथिल करना - (अवसादन)। 'उप' का अर्थ है- समीप और 'नि' का अर्थ है- ध्यानपूर्वक। अतः उपनिषद शब्द का अर्थ हुआ - शिष्य का गुरु के समीप ध्यानपूर्वक परम तत्व का गूढ़ उपदेश सुनने के लिए बैठना, जिससे शिष्य की अविद्या का नाश होता है, एवं उसे ब्रह्म-प्राप्ति (मोक्ष) होती है तथा उसके समस्त कर्म-बंधन एवं तज्जन्य दुःखादि का शिथिलीकरण होकर क्षय हो जाता है। उपनिषद शब्द मुख्य रूप से ब्रह्मविद्या का वाचक है तथा गौण रूप से ब्रह्मविद्याप्रतिपादक ग्रंथों के लिए प्रयुक्त होता है। गुरु द्वारा अधिकारी शिष्य को एकांत में दी जाने के कारण यह रहस्यविद्या या गुह्यविद्या भी कहलाई। उपनिषद के प्रतिपाद्य विषय हैं - ब्रह्मविद्या, आत्म-तत्व, पंचकोश, परम-तत्व, माया, कर्म-बंधन, अविद्या तथा मोक्ष और मोक्ष साधन।

'मुक्तिकोपनिषद' के अनुसार उपनिषदों की संख्या 108 है, किंतु प्रामाणिक तथा महत्वपूर्ण उपनिषद् ग्यारह (11) हैं जिन पर शंकराचार्य के भाष्य उपलब्ध हैं। ये हैं - ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक और श्वेताश्वतर उपनिषद।

इनमें कुछ उपनिषद गद्य में, कुछ पद्य में और कुछ गद्य-पद्य दोनों में। छान्दोग्य और बृहदारण्यक उपनिषद सर्वाधिक प्राचीन माने जाते हैं। इनमें (उपनिषद्) में अद्वैत, विशिष्टाद्वैत एवं द्वैतवादपरक वाक्य उपलब्ध हैं। उपनिषद ही भारतीय दर्शन की निधि हैं।

इस प्रकार से वेद के संहिता भाग और ब्राह्मण भाग को 'कर्मकाण्ड'; आरण्यक भाग को 'उपासना काण्ड' तथा उपनिषद् भाग को 'ज्ञान काण्ड' कहा जाता है। कर्म प्रधान होने पर भी संहिता और ब्राह्मण भागों में आध्यात्मिक तत्व-चिंतन के बीज विद्यमान हैं तथा आरण्यक भाग में उपासना द्वारा कर्म से ज्ञान की ओर संक्रमण है।

अतः उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम देख सकते हैं कि भारतीय दर्शन का आधाररूप स्त्रोत वेद एवं उपनिषद हैं। इसमें भी विशेषकर उपनिषदें ही हमारी भारतीय दर्शन की मूल निधि कही गयी हैं। यद्यपि वेद स्वयं कोई विशुद्ध दार्शनिक रचना नहीं है, किंतु निश्चय ही वेदों में यत्र-तत्र जो दार्शनिक विचार बिखरे हुए हैं, वे अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। वेदों का दार्शनिक दृष्टि से महत्व इसी से स्पष्ट होता है कि, भारतीय दर्शन का एक बड़ा भाग 'आस्तिक षड्दर्शन' (सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, वेदांत) अपने मूल के लिए इन्हीं को प्रमाण के रूप में स्वीकार करते हैं। इसके अतिरिक्त परम्परागत हिन्दू धर्म, यथा – वैष्णव, शैव, शाक्त आदि अन्य अनेक धर्मों के विभिन्न संप्रदायों के बीज वेदों में देखे जा सकते हैं। इस प्रकार से भारतीय दर्शन अपने अस्तित्व के लिए वेद, उपनिषद, स्मृति, पुराण, आदि पर आश्रित है तथा इनको ही प्रमाण स्वरूप स्वीकार करता है।

———— x ————